क्या है वंचितों की सामाजिक सुरक्षा योजनाओं की असुरक्षा के आधार

• सचिन कुमार जैन

छतरपुर जिले के धरमपुरा गांव की हाथ–पैरों से विकलांग नन्हीं बाई को मिलने वाली 150 रू. की वृद्धवस्था पेंशन तीन साल पहले अचानक बंद कर दी गई। जब उसने पंचायत से इसका कारण जानना चाहा तो पता चला कि कारगिल युद्ध के शहीदों को सामाजिक सुरक्षा देने के लिए उनकी पेंशन सरकार कारगिल कोष में जमा कर रही है। सच्चाई यह नहीं है, वास्तव में तीन साल पहले फर्जी हितग्राहियों के नाम सूची से निकालने के नाम पर सरकार ने कई जरूरतमंदों की भी पेंशन बंद कर दी। यह अकेला उदाहरण नहीं है, केवल इसी जिले में 660 ऐसे मामलों से रूबरू हुआ जा सकता है।

सामाजिक सुरक्षा पेंशन के जरिये सरकार समाज के वंचित तबकों, वृद्धों विकलांगों और निराश्रित व्यक्तियों को जीवन जीने के लिये बुनियादी सहयोग प्रदान करती है परन्तु गैर जवाबदेहिता और उपेक्षा के अभाव में यह व्यवस्था पूरी तरह से भ्रष्टाचार की भेंट चढ़ गई है। पहले पता चला कि इंदौर में 28 हजार हितग्राहियों की पेंशन सुनियोजित ढंग से भ्रष्टाचार के हवाले हो गई, तो इसके बाद प्रदेश भर में डेढ़ लाख ऐसे ही वंचित तबकों के लोगों की पेंशन अमानवीय व्यवस्था की मिसाल बन गई। यह भ्रष्टाचार किसी एक व्यक्ति या व्यवस्था के एक हिस्से की सक्रियता का परिणाम नहीं है बल्कि इसमें राज्य से लेकर गांव स्तर तक के सरकारी नुमाइंदों और जनता के प्रतिनिधियों की अपनी–अपनी भूमिका होती है।

सामाजिक सुरक्षा पेंशन की व्यवस्था और प्रक्रिया पारदर्शी और जवाबदेय नहीं है। यह पेंशन हर पात्र व्यक्ति को नहीं दी जाती है बल्कि इसके लिये केन्द्र और राज्य सरकारें कोटा तय करती हैं। वर्तमान में इस कोटे की सीमा के कारण जहां 3 व्यक्तियों को सामाजिक सुरक्षा पेंशन मिलना चाहिये वहां एक व्यक्ति को ही पेंशन मिल पा रही है। ऐसा विश्वास किये जाने के कई कारण है कि सरकार भी पेंशन के मामले में भ्रष्टाचार को संरक्षण प्रदान करती है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में यह सबसे महत्वपूर्ण नहीं है कि एक योजना में सवा सौ करोड़ रूपये का घोट्ला हुआ है बल्कि सबसे गंभीर बात यह है कि इसके कारण विकेन्द्रीकृत शासन व्यवस्था के प्रति आम आदमी का अविश्वास चरम पर पहुंच जायेगा क्योंकि प्रावधानों के अनुसार पंचायतें और नगरीय निकाय ही वास्तविक जरूरतमंद व्यक्तियों की पहचान और सत्यापन करते हैं। हालांकि अब यह संकेत मूर्त रूप लेने लगे हैं कि स्थानीय सत्ता के प्रति अविश्वास का माहौल बनाने में लालफीताशाही ने सबसे अहम् भूमिका। पंचायत के स्तर पर यह तय होता है कि चालू वित्त वर्ष में कितने हितग्राहियों को सालभर पेंशन मिलना है, इसके बावजूद पंचायत को इसका एक मुश्त बजट नहीं मिलता है और पंचायत के सचिव या सरपंच जनपद जाकर राशि निकालकर लाते हैं। सर्वोच्च न्यायालय के आदेशों के अनुसार यह पेंशन हर माह की सात तारीख तक दिया जाना जरूरी है। परन्तु 22 हजार पंचायतों में एक भी उदाहरण ऐसा नहीं मिलेगा जहां हर माह गरीब रोटी के मोहताज लोगों को हर माह पेंशन मिलती हो।

नन्हीं बाई को तीन–तीन माह तक पेंशन नहीं मिलती है और जब सचिव तीन माह के 450 रूपये लेकर आता है तो एक माह की पेंशन सेवा शुल्क के रूप में जमा कर लेता है। बड़वानी जिले में पेंशन पाने वालों के बैंक में खाते खोले गये हैं परन्तु बैंक से राशि निकालने के लिये तो सचिव साथ जाता ही है और अपना हिस्सा राशि आहरण पर्ची भरने के नाम पर हथिया लेता है। भोपाल में मनीआर्डर के जरिये सामाजिक सुरक्षा पेंशन का भुगतान किया जाता है परन्तु मनीआर्डर के संदेश में यह कहीं नहीं दर्ज होता है कि जो पेंशन हितग्राही को मिल रही है वह किस माह की है, इसका कोई जिम्मेदार रिकार्ड भी नहीं होता। यह बहुत सही तथ्य है कि मध्यप्रदेश में दो लाख से ज्यादा अपात्र लोग सामाजिक सुरक्षा पेंशन डकार कर रहे हैं और इसी तथ्य के आधार पर वर्ष 2002 में मध्यप्रदेश सरकार ने हितग्राहियों, का पुनरीक्षण कर 1113388 में से दो लाख से ज्यादा लोगों की पेंशन बंद कर दी थी, परन्तु आज जब हम समुदाय के बीच बैठकर उनकी कहानी सुनते हैं तो पता चलता है कि वास्तव में सामाजिक सुरक्षा पेंशन सूची से गलत लोगों के नाम नहीं हटे हैं बल्कि वास्तविक जरूरतमंदों की ही पेंशन बंद कर दी गई।

सच्चाई यह है कि जिस तरह से पेंशन के हितग्राहियों के चयन, पेंशन के वितरण और निगरानी की व्यवस्था बनी है उसमें भ्रष्टाचार की अपार संभावनायें मौजूद हैं। प्रावधान यह है कि ग्रामसभा ऐसे जरूरत मंदों के नाम प्रस्तावित करेगी और जनपद पंचायत उनकी पड़ताल कर स्वीकृति के लिये अनुमोदन कर जिला पंचायत को भेजेगी। परन्तु वास्तविकता यह है कि जहां ग्रामसभा 7 लोगों के नाम प्रस्तावित करती है वहां एक व्यक्ति का नाम ही स्वीकृत होता है। इस परिस्थिति में गांव के प्रभावशाली व्यक्ति, सरपंच या सचिव की राजनीति ही रंग लाती है और उनके चहेते पेंशन पा जाते हैं। नौगांव जनपद के वीरपुरा गांव में चार वृद्ध रहते हैं, अकेले, असहाय और निराश्रित। ग्रामसभा ने तो उनकी पेंशन के लिये प्रस्ताव भेज दिये परन्तु जिले का कोटा पूरा हो चुका है इसलिये जरूरतमंद होने के बावजूद उनकी पेंशन स्वीक्त नहीं की गई।

वर्ष 2002 में मध्यप्रदेश सरकार ने सबसे गरीब परिवारों को 10 किलो मुफ्त राशन देने वाली अन्नपूर्णा योजना यह कहकर बंद कर दी थी कि इसके 1.19 लाख हितग्राहियों को 150 रूपये की सामाजिक सुरक्षा पेंशन के लाभ के साथ सस्ते राशन वाली अन्त्योदय अन्न योजना का लाभ दिया जायेगा ताकि वे 2 रूपये किलो गेहूं और 3 रूपये किलो चावल खरीद सकें; परन्तु तीन वर्ष गुजर जाने के बाद स्थिति यह है कि सवा लाख में से ढाई हजार परिवारों को ही अभी पेंशन मिलना शुरू हुई है। ये वे परिवार हैं जो बामुश्किल एक समय का भरपेट भोजन जुटा पाते हैं, इनके पास न तो क्षमता है न अवसर। इस संदर्भ में मध्यप्रदेश सरकार ने सर्वोच्च न्यायालय के आदेश का भी उल्लंघन किया है जिसमें कहा गया था कि कोई भी सरकार अन्नपूर्णा योजना किसी भी परिस्थिति में बंद नहीं करेगी पर मध्यप्रदेश सरकार ने से बंद कर सवा लाख लोगों को भुखमरी की कगार पर लाकर खड़ा कर दिया।

विकलांगों की स्थिति और भी दयनीय है। सामाजिक न्याय विभाग के सर्वेक्षण के मुताबिक प्रदेश में 11.31 लाख विकलांग व्यक्ति हैं जिनमें से 8.89 लाख गरीबी की रेखा के नीचे रहते हैं। इसके बावजूद

अभी केवल 66.96 हजार विकलांग व्यक्तियों ने सामाजिक सुरक्षा योजना का लाभ मिल रहा है जबकि इसी सर्वेक्षण में 3.87 लाख विकलांग व्यक्तियों ने सामाजिक सुरक्षा की मांग की थी। सर्वे हुये तीन साल गुजर चुके हैं और आंकड़े धूल के पिस्सु की तरह फाईलों मे कैद है और जरूरतमंद अपंग सतत् भुखमरी के लिये स्वतंत्र है। यह स्वीकार करना बहुत महत्वपूर्ण है कि वंचित और उपेक्षित परिवारों को सामाजिक सुरक्षा उपलब्ध कराना राज्य का दायित्व है और इसे हासिल करना वंचितों का हक।

सामाजिक सुरक्षा पेंशन की व्यवस्था अपने चरम स्तर तक खोखली हो चुकी है। क्योंकि इसमें कहीं भी सरकारी और जनता के नुमांइंदों की जिम्मेदारी तय नहीं है। तीन साल पहले जब सरकार को पता चला कि लाखों लोग अनैतिक ढंग से पेंशन ले रहे हैं, तब गरीबों के नाम सूची से हटा दिये गये परन्तु उन जिम्मेदार कर्मचारियों में से एक पर भी कार्रवाई नहीं हुई। भोपाल में नगर निगम के एक कर्मचारी ने 65 हजार रुपये की पेंशन का गबन किया। जब मामला सामने आया तो उसके राशि लेकर निगम के खाते में जमा कर दी गई परन्तु यह उन निराश्रितों को नहीं मिली जिनके हक की वह पेंशन थी। कर्मचारी की सत्ता बरकरार है। हाल के ही अनुभव देख लें बड़े पेंशन घोटाले सामने आने के बावजूद राजनैतिक स्तर पर कोई भी दल या जनप्रतिनिधि सड़क पर उतरकर इन वंचितों की भीड़ में आवाज बुलंद करने के लिये आगे नहीं आया। इसका कारण यह है कि गरीबों की योजनाओं में भ्रष्टाचार में राजनैतिक सहभागिता भी है। इस योजना का पूरी तरह से राजनीतिकरण हो चुका है क्योंकि जनप्रतिनिधि सभाओं में यही वायदा करके वोट मांगते हैं कि वे सबकों पेंशन दिलवायेंगे, फिर उन जनप्रतिनिधियों के कार्यकर्ता लोगों के आवेदन इकट्ठे करने में जुट जाते हैं। ऐसी स्थिति में पात्र–अपात्र सभी को एक ही तराजू में तौला जाता है। आगे चलकर शहरी क्षेत्र में पार्षद आंख मूंदकर पेंशन के आवेदनों को अनुमोदित कर देते हैं। इन्हें स्वीकृति देने का काम राजनीतिक दबाव में नगर निकाय के जोनल अधिकारी करते हैं। इस प्रक्रिया में सबसे अहम् भूमिका पार्षद और निकाय अधिकारी की है परन्तु दोना की ही जवाबदेही तय नहीं है। अफसरों का मत है कि वैसे ही नगरीय निकायें के जिम्मे ज्यादा ही बोझ डाल दिया गया है ऐसे में जब प्राथमिकता तय होती है तो सरकार और निकाय, सामाजिक सुरक्षा योजना को निचली प्राथमिकता देते हैं। वास्तव में अब तक परिवार का संरक्षण न होने पर गरीबों को निराश्रित की श्रेणी में रखकर सरकार उन्हें सामाजिक सुरक्षा देती रही है; परन्तु जब सामाज और राज्य भी उन्हें संरक्षण नहीं देंगें तो फिर उन्हें किस श्रेणी में रखा जायेगा और उनके प्रति कौन जवाबदेय होगा?

Vikas Samvad, E-7/226, First Floor, Arera Colony, ShahPura, Bhopal, Madhya Pradesh. rtfmp@rediffmail.com